आचारांग एवं कल्पसूत्र में वर्णित महावीर चरित्रों का विश्लेषण एवं उनकी पूर्वापरता का प्रश्न

के० आर० चन्द्र

भगवान् महावीर की साधना का वर्णन आचारांग के प्रथम श्रुतस्कंध के 'उवहाण' सुत्त में प्राप्त होता है; परन्तु वहाँ पर उनके जीवन के बारे में कोई विशेष सामग्री उपलब्ध नहीं है। उनके जीवन-चरित्र का वर्णन आचारांग के द्वितीय श्रुतस्कंध के 'भावना' नामक अध्याय में और कल्पसूत्र (पर्युषणा-कल्प) में आता है। परम्परा के अनुसार भद्रबाहु ने कल्पसूत्र की रचना की थी। सम्भवतः कल्पसूत्र में भगवान् महावीर के चरित्र को सर्वप्रथम व्यवस्थित रूप देने का प्रयत्न किया गया है। कल्पसूत्र में महावीर-चरित्र विस्तारपूर्वक मिलता है जबकि आचारांग में वह संक्षिप्त रूप में मिलता है। यद्यपि दोनों में समय-समय पर नवीन सामग्री जुड़ती रही है यह उनके अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है। कल्पसूत्र की कुछ विस्तृत बातें आचारांग में संक्षिप्त रूप में ली गयी हैं इससे यह भी प्रतीत होता है कि आचारांग के द्वितीय श्रुतस्कन्ध में वर्णित महावीर-चरित्र का आधार कल्पसूत्र रहा है। कल्पसूत्र के महावीर-चरित्र को प्रामाणिक बनाने के लिए उसे आचारांग में जोड़ा गया होगा क्योंकि जो बातें अंगों में नहीं हों वे प्रामाणिक कैसे हो सकती हैं। यह सब होते हुए भी दोनों ग्रन्थों में महावीर-चरित्र मूल रूप में नहीं रह सका। उसमें समय-समय पर वृद्धि होती रही है। कुछ प्रसंग आचारांग में ही मिलते हैं तो कुछ कल्पसूत्र में ही मिलते हैं। दोनों में समान रूप से उपलब्ध महावीर-चरित्र की भाषाओं में भी कोई ऐसा तथ्य प्राप्त नहीं होता जिनसे उनकी प्राचीनता एवं अर्वाचीनता ज्ञात हो सके और उन्हें एक दूसरे के बाद का कहा जा सके। फिर भी कुछ प्रसंग ऐसे अवश्य हैं जिनसे प्रमाणित होता है कि आचारांग के द्वितीय श्रुतस्कन्ध के चरित्र वर्णन में कुछ प्राचीन तथ्य सुरक्षित रहे हैं। इसका कारण यह हो सकता है कि कल्पसूत्र का पठन-पाठन बहुत होता रहा है और उसकी प्रतियाँ भी उत्तरोत्तर बहुत लिखी जाती रही हैं अतः उसमें समय-समय पर परिवर्तन आना सहज था जबकि आचारांग के साथ ऐसा नहीं बन सका।

१. (क) महावीर-चरित्र

आचारांग द्वितीय श्रुतस्कंध के अध्ययन १५ एवं कल्पसूत्र में जो सामग्री समान रूप से मिलती है उसका विवरण—

(१) महावीर के जीवन के पाँच प्रसंगों (च्यवन, गर्भापहरण, जन्म, दीक्षा एवं केवल ज्ञान) का हस्तोत्तरा नक्षत्र में होने का उल्लेख और स्वाति नक्षत्र में निर्वाण (आचा० सू० ७३३, कल्पसूत्र १)

(२) आषाढ शुक्ल षष्ठी को देवलोक से देवानंदा के गर्भ में अवतरण और उस समय तीन प्रकार के ज्ञान का होना (७३४/२,३)

(३) देवानन्दा एवं त्रिशला के गर्भों की अदलाबदली। उस समय भी तीन ज्ञान वाले होने का उल्लेख (७३५।२७, २९, ३०, ३१)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(४) त्रिशला द्वारा पुत्र जन्म (७३६।९३)

(५) देवों द्वारा उत्सव (७३७।९४)

(६) उनके द्वारा अमूल्य वस्तुओं की वर्षा एवं तीर्थंकर का अभिषेक (७३८, ७३९।९५,९६)

(७) दशाह मनाना, भोजन समारंभ, दान एवं कुल में वृद्धि होने के कारण वर्धमान नामकरण (७४०।१००-१०३)

(८) उनका काश्यपगोत्र एवं तीन नाम,
पिता के तीन नाम,
माता के तीन नाम,
चाचा, भाई, बहिन, पत्नी, पुत्री एवं पौत्री के नामों का उल्लेख (७४३, ७४४।१०४-१०९)

(९) तीस वर्ष का गृहस्थवास, माता-पिता के देवलोक जाने पर अपनी प्रतिज्ञा पूरी होने पर सभी वस्तुओं का त्यागकर एवं दाताओं में विभाजित कर प्रव्रज्या लेना (७४६, ७६६।११०, १११, ११३, ११४)

(१०) मार्गशीर्ष कृष्ण १० को दीक्षा ली (७६६।१११, ११४)

(११) सभी उपसर्गों को सहन किया (७७१।११६)

(१२) संयम, तप, ब्रह्मचर्य, समिति एवं गुप्ति पूर्वक निर्वाणमार्ग में भावना करते हुए विहार करना (७७०।१२०)

(१३) तेरहवें वर्ष में वैशाख शुक्ल दसमी को ऋजुबालिका नदी के किनारे श्यामाक के खेत में जृम्भिकग्राम के बाहर शालवृक्ष के नीचे केवलज्ञान की प्राप्ति (७७२।१२०)

(१४) सर्व भावों के ज्ञाता बनकर विहार करने लगे (७७३।१२१)

(१५) निर्वाण प्राप्त होने पर देवताओं (द्वारा महिमा) के आगमन से कोलाहल (७७४।१२५)

कल्पसूत्र में प्रकारान्तर से मिलने वाली सामग्री

(१६) जब से भगवान् महावीर गर्भ में आये तब से उस कुल की अमूल्य वस्तुओं के कारण वृद्धि होने लगी (७४०।८५)

[कल्पसूत्र में यह बात मात्र अर्वाचीन हस्तप्रतों में ही मिलती है]

(१७) परिपक्व ज्ञान वाले होने की बात (७४२) कल्पसूत्र (९,५४,७६) में स्वप्न के फल बतलाते समय कही गयी है ।

१. (ख) शब्दों के क्रम में भेद

तादृश सामग्री मिलते हुए भी दोनों के पाठों में कभी-कभी शब्दों के क्रम में अन्तर है ।

[मूल पाठ कल्पसूत्र का है जब कि आचारांग का पाठ संख्या-क्रम से बताया गया है ।]

(१) क० सू० १	अणंते	अणुत्तरे	निव्वाघाए अव्वाघाते	निरावरणे
आचा० ७३३	५	६	३	४
	कसिणे	पडिपुन्ने	केवलवरनाणदंसणे	
	१	२	७	
	समुप्पन्ने	साइणा	परिनिव्वुए	भगवं
	८	९	११	१०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२) क० सू० २
आचा० ७३४ के क्रम में बहुत अन्तर है।

(३) क० सू० ३ १ ३ २
आचा० ७३४ चइस्सामि त्ति जाणइ, चयमाणे न जाणइ, चुए मि त्ति जाणइ।

(४) क० सू० ९३ जे से गिम्हाणं पढमे मासे दोच्चे पक्खे
आचा० ७३६ ७ ८ ९ १० ११ १२ १३
चित्तसुद्धे तस्स णं चित्त सुद्धस्स तेरसीदिवसेणं तेरसीपक्खेणं
१४ १५ १६ १७ १८
(तेरसीपक्खेणं) नवण्हं मासाणं पडिपुन्नाणं
१ २ ३
अद्धट्ठमाण य राइंदियाणं विइक्कंताणं पुव्वरत्तावरत्त-
४ ५ ६
कालसमयंसि हत्थुत्तराहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं जोगोवगतेणं
१९ २० २१
आरोगा आरोगं (अरोगा अरोगं) दारयं
२२ २३
पयाया (पसूया)।
२४

(५) क० सू० १२० के क्रम में काफी अन्तर है।
आचा० ७७२

१. (ग) भाषा सम्बन्धी तुलना

जो जो प्रकरण दोनों ग्रन्थों में समान रूप से मिलते हैं उनकी भाषा का अध्ययन करने पर दोनों की भाषा में प्राचीनता-अर्वाचीनता का भेद नजर नहीं आता है।

प्रथमा एक० व० के लिए 'ए' विभक्ति, सप्तमी ए० व० के लिए 'ए और अंसि', भविष्य-काल के लिए 'स्स' विकरण, 'भू' धातु के 'भव' एवं 'हो' रूप एवं संबंधक भूत कृदन्त के लिए प्रयुक्त 'त्ता, च्चा, ट्टु' प्रत्ययों के अनुपात में कोई खास अन्तर मालूम नहीं होता है अतः दोनों ग्रंथों के मूल पाठ की रचना सामान्यतः एक समान लगती है। ध्वनि परिवर्तन एवं प्रत्ययों की दृष्टि से कुछ रूप आचारांग में तो कुछ रूप कल्पसूत्र में प्राचीन मालूम होते हैं।

प्राचीन रूप (आचारांग)	अर्वाचीन रूप (कल्पसूत्र)
गोत्तस्स (७३४)	गुत्तस्स (३)
असुभाणं, सुभाणं (७३५)	असुहे, सुहे (२७)
चेत्तसुद्धे (७३६)	चित्तसुद्धे (९३)
नामधेज्जा (७४४)	नामधिज्जा (१०४, १०८)
दातारेसु (७४६)	दायारेहिं (१११)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(कल्पसूत्र)	(आचारांग)
इमीसे (२)	इमाए (७३४)
आवि होत्था (३,३१)	यावि होत्था (७३४, ७३५, ७३७, ७४४)
	(कल्पसूत्र में भी 'यावि होत्था' का प्रयोग है २९,९४,)
भगिणी (१०७)	भइणी (७४४)

२ (क) आचारांग में उपलब्ध ऐसे प्रसंग जो कल्पसूत्र के महावीर-चरित्र में मिलते ही नहीं हैं—

(१) पंच धात्रियों द्वारा संवर्धन करना। (७४१)

(२) प्रव्रज्या धारण करने के पहले आसक्ति रहित एवं संयमपूर्वक (अप्पुस्सुयाइं·····चाए विहरति) पंचेन्द्रिय भोगों का सेवन किया। (७४२)

(३) भगवान् के माता-पिता पार्श्वापत्यी थे और वे महाविदेह में सिद्ध होंगे। (७४५)

(४) एक संवत्सर तक दान दिया और अभिनिष्क्रमण के अभिप्राय वाले हुए। (७४६) कल्पसूत्र (१११) के अनुसार एक वर्ष की अवधि तक दान देने का उल्लेख नहीं है और अभिनिष्क्रमण के अभिप्राय वाले होने का भी उल्लेख नहीं है। उसमें तो ऐसा कहा गया है कि भगवान् ने अपने ज्ञान एवं दर्शन से जब जाना कि निष्क्रमण-काल आ गया है तब दीक्षा ले ली।

(५) दीक्षा के अवसर पर वैश्रमण देव द्वारा भगवान् द्वारा त्यक्त आभरण-अलंकारों को ग्रहण करना एवं शक्रेन्द्र द्वारा लोच किये हुए केशों को क्षीरोद सागर ले जाना। (७६६)

(६) चारित्र धारण करते ही मनःपर्यय ज्ञान का होना। (७६९)

(७) मनःपर्ययज्ञान होने के बाद ऐसा पहले से ही अभिग्रह धारण करना कि बारह वर्ष तक देव-मनुष्य-तिर्यक् कृत उपसर्गों को सम्यक् पूर्वक सहन करूँगा। (७६९)

(८) दीक्षा के दिन शाम को कर्मारग्राम विहार करना (७७०) जो कि यह पाठ सभी प्रतों में नहीं मिलता है।

(९) केवलज्ञान होने पर भगवान् ने प्रथम देवताओं को और बाद में मनुष्यों को धर्मोपदेश दिया। (७७५)

इतना तो स्पष्ट है कि ये प्रसंग कल्पसूत्र की रचना के बाद आचारांग के इस महावीर-चरित्र में आये हैं अन्यथा उनका उल्लेख कल्पसूत्र म भी हुआ हाता।

इन सब अतिरिक्त प्रसंगों से महान व्यक्ति की महत्ता का संवर्धन किया गया है जो सभी महान व्यक्तियों के साथ होता है। इन बातों से कुल का वैभव बढ़ाया गया और उसका एक पूर्व-तीर्थंकर के साथ पहले से ही सम्बन्ध स्थापित किया गया, त्याग और दान की महिमा बढ़ायी गयी, बचपन से ही वैराग्य की भावना बतायी गयी, संकल्प एवं सहनशक्ति को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया, दिव्य तत्त्वों का समावेश किया गया एवं चतुर्थ ज्ञान की कमी की पूर्ति की गयी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२ (ख) कुछ ऐसे उल्लेख जिनका स्पष्टीकरण कल्पसूत्र के महावीर-चरित्र के बिना नहीं हो सकता

(१) एक अनुकम्पाधारी देव ने ['जायमेयं' तिकटटु] यही आचार, कर्त्तव्य या रिवाज है ऐसा सोचकर गर्भों की अदलाबदली की (७३५)। यह आचार क्या है। उसके बारे में कहीं पर कुछ भी नहीं कहा गया है जबकि कल्पसूत्र (२०) में बड़े ही विस्तार के साथ समझाया गया है कि महान पुरुष ब्राह्मण कुल में जन्म नहीं लेते हैं और शक्रेन्द्र का यह कर्त्तव्य है कि गर्भ का किसी उच्च कुल में स्थानान्तर करें।

(२) दीक्षा लेते समय अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण होने (समत्त पइण्णे) का उल्लेख है (७४६)। यह प्रतिज्ञा क्या थी? इसका उत्तर कल्पसूत्र (८७-९०) में मिलता है वहाँ पर गर्भ में ही भगवान् महावीर यह अभिग्रह धारण करते हैं कि माता-पिता के जीवन काल में प्रव्रज्या धारण नहीं करूँगा।

स्पष्ट है कि कल्पसूत्र में इन बातों के आने के बाद इन्हें आचारांग में जोड़ा गया है।

२ (ग) कल्पसूत्र से भेद रखने वाले तथ्य

(१) आचारांग (७३५) गर्भ का अपहरण हो रहा है इस बात को जानते थे। कल्पसूत्र (३१) के अनुसार इसे नहीं जानते थे।

(२) आचारांग में नत्तुई (दौहित्री) कोसिय गोत्त की कही गयी है (७४४) जबकि कल्पसूत्र में वह कासथी गोत्त की कही गयी है (१०९)।

(३) प्रव्रज्या धारण करने से पहले षष्ठ भक्त का त्याग किया और एक शाटक ग्रहण करके लोच किया (७६६)। कल्पसूत्र के अनुसार लोच करने के बाद षष्ठ भक्त का त्याग किया और एक देवदूष्य ग्रहण किया (११४)।

२ (घ) आचारांग में बाद में जोड़े गये पाठ या बदले हुए तथ्य

(१) भगवान् गर्भावस्था में ही तीनों बातों को जानते हैं (तिण्णाणोवगते) (७३४)। इसमें से एक 'चयमाणे ण जाणति' कल्पसूत्र में भी आता है परन्तु आचारांग में इसके साथ स्पष्टीकरण सम्बन्धी यह पाठ आता है कि च्यवन काल इतना सूक्ष्म होता है कि च्यवन की घटना जानी नहीं जा सकती। यह स्पष्टीकरण कल्पसूत्र में नहीं है। स्पष्ट है कि आचारांग में 'सुहुमे णं से काले पण्णत्ते' पाठ बाद में जुड़ा है।

(२) जन्म (७३६) देवताओं द्वारा उत्सव, तीर्थंकर का अभिषेक एवं कौतुककर्म के बाद ऐसा वर्णन है कि जब भगवान् महावीर गर्भ में आये तब से कुल में सभी तरह से अभिवृद्धि होने लगी थी। वास्तव में यही बात जन्म के पहले आनी चाहिए थी क्योंकि नामकरण के समय (७४०) यही बात पुनः दुहरायी गयी है कि इसी कारण से उनका नाम वर्धमान रखा गया।

अतः उपरोक्त पाठ बाद में जोड़े गये हैं यह बिल्कुल स्पष्ट है।

२ (ङ) अन्य पाठों में वृद्धि—

(१) कल्पसूत्र में माहणकुण्डग्गाम एवं खत्तिय कुंडग्गाम (२,१०) ऐसा उल्लेख आता है जब कि आचारांग में उन्हें दाहिणमाहण कुंडपुर एवं उत्तरखत्तिय कुंडपुर कहा गया है (७३४-७३५)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२) पंचमुष्टिलोच करने के बाद सिद्धों को नमस्कार करना और सर्व पापकर्म अकरणीय है ऐसा सोचकर 'सामायिक चारित्र' धारण करना ये (७६६) दोनों बातें कल्पसूत्र (११४) में नहीं आती हैं। कल्पसूत्र में तो मुंडन करवाकर अगार से अनगार बनने का ही उल्लेख है जो कल्पसूत्र के सूत्र १ में भी प्रारम्भ में उल्लिखित है और वैसा ही उल्लेख आचारांग में भी प्रारम्भ में (७३३) आता है। आचारांग में आगे सू० ७६९ में जब उन्हें मनःपर्यय ज्ञान होता है तब 'सामायिक युक्त क्षायोपशमिक चारित्र' का उल्लेख है।

(३) हत्थुत्तराहिं और मुंडे भवित्ता (७३३) के बीच 'सव्वतो सव्वत्ताए' का पाठ अधिक है।

(४) महाविजय**सिद्धत्थ**पुप्फुत्तरवरपुंडरीय**दिसासोवत्थियवद्धमाणातो** महाविमाणाओ..... चुते (७३४) (रेखांकित पाठ अधिक है)।

(५) जन्म के समय जो वर्षा हुई उसमें **अमृतवास** का उल्लेख कल्पसूत्र में नहीं है (७३८)।

(६) प्रव्रज्या का लोच करते समय सिंहासन पर एवं पूर्व दिशा की ओर मुख करके बैठने का उल्लेख कल्पसूत्र में नहीं है (७६६)।

(७) केवलज्ञान के समय 'झाणंतरियाए वट्टमाणस्स' (कल्पसूत्र १२०) के बदले आचारांग (७७२) 'सुक्कझाणंतरियाए वट्टमाणस्स' में आता है।

(८) उड्ढं जाणुं अहो सिरस' (७७२) का उल्लेख कल्पसूत्र में नहीं है।

(९) ऋजुबालिका के मात्र तीर के बदले उसे उत्तर कूल (७७२) कहा गया है।

(१०) चैत्य के आसपास के बदले उत्तर-पूर्व दिशा भाग (७७२) कहा गया है।

२ (च) आचारांग में देव-कृत्य का सारा का सारा प्रसंग बाद में जोड़ा गया है

(१) यह पहले ही स्पष्ट कर दिया गया है कि एक वर्ष तक दान करने का एवं अभिनिष्क्रमण के अभिप्राय वाले हुए ये दोनों बातें बाद में जोड़ी गयी हैं। इसके बाद में आने वाली सारी सामग्री (सू० ७४७ से ७६५, जिसमें बढ़ा-चढ़ा तथा कभी-कभी अलंकृत वर्णन है) भी बाद में जुड़ी है। उसमें १७ गाथाएँ हैं जिनकी भाषा अर्धमागधी न होकर महाराष्ट्री है एवं उनका छन्द विकसित गाथा छन्द है। (ये गाथाएँ निर्युक्ति एवं विशेषावश्यकभाष्य में भी मिलती हैं) इन गाथाओं के अलावा जो गद्यांश है और उसमें जो वर्णन उपलब्ध है यह कल्पसूत्र (११०-११४) में नहीं मिलता है। इसमें सभी देवताओं का आगमन, शक्रेन्द्र द्वारा दिव्य सिंहासन की रचना, भगवान् का अभिषेक, उन्हें आभूषणों से सजाना, शिविका में देवेन्द्रों द्वारा चँवर डुलाना इत्यादि मिलता है।

सूत्र ७६७ एवं ७६८ की दो गाथाएँ भी इसी प्रकार बाद में जोड़ी गयी प्रतीत होती हैं। उनमें कहा गया है कि जब भगवान् ने चारित्र्य धारण किया तब देवों एवं मनुष्यों का घोष शान्त हो गया था तथा देवों के द्वारा उपदेश सुना गया जो कि दीक्षा लेने के ठीक पश्चात् तथा केवल ज्ञान की प्राप्ति के पूर्व की घटना है और उस पद्य में (कुछ पाठ रह गया हो ऐसा लगता है) त्रुटियाँ भी हैं। कल्पसूत्र में ऐसे उल्लेख नहीं हैं।

(३) इसी देव-कृत्य एवं देव-महिमा के प्रसंग पर भगवान् महावीर को तीर्थंकर कहा गया है (७५०)। वैसे ही कल्पसूत्र में भी जो बाद का पाठ है वहाँ (सू० २) उन्हें चरम तीर्थंकर कहा गया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है। अन्य जगह पर मूल पाठ में तीर्थंकर शब्द नहीं है, सब जगह उन्हें 'समणे भगवं महावीरे' कहा गया है। दोनों ही चरित्रों में केवल-ज्ञान होने के बाद भी उन्हें 'जिन' ही कहा गया है (आचारांग ७७३, कल्पसूत्र १२१)।

आचारांग की इस सामग्री में समास-बहुलता एवं काव्यात्मक कृत्रिम शैली के दर्शन होते हैं। उदाहरणार्थ—सिंहासन, शिविका, वनखंड आदि के वर्णन ७४७-७६५।

२. (ज) आचाराङ्ग के कुछ पाठों की अस्पष्टता एवं व्याकरण सम्बन्धी त्रुटियां

(१) समणे भगवं महावीरे अणुकंपएणं देवेणं····कुच्छिंसि गब्भं साहरति (७३५)। 'साहरति' के स्थान पर 'साहरिते' होना चाहिए ऐसा सम्पादक ने भी सूचित किया है।

(२) तं णं राइं····· देवेहिं देवीहिं य·····उप्पिंजलगभूते यावि होत्था (७३७)। यावि के पहले 'करने के अर्थ वाला' कोई रूप आना चाहिए था। कल्पसूत्र में (१४) ऐसा पाठ है—'सा णं रयणी····उप्पिंजलमाणभूया होत्था' जो व्याकरण की दृष्टि से शुद्ध है।

(३) सूत्र ७७२ में 'गिम्हाणं दोसे मासे' पाठ आया है कल्पसूत्र में (१२०) 'दोच्चे मासे' आता है। यहाँ सम्पादक ने कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया है।

३ (क) कल्पसूत्र में उपलब्ध परन्तु आचारांग में अनुपलब्ध सामग्री

(१) तेईस तीर्थंकरों के पश्चात् चरम तीर्थंकर के रूप में पूर्व तीर्थंकरों के निर्देश के अनुसार गर्भ में अवतरण (२)

(२) गर्भधारण करते समय देवानन्दा द्वारा चौदह स्वप्न देखना; त्रिशला द्वारा भी उसी प्रकार स्वप्न-दर्शन (३२-८३); (पति को सूचित करना एवं पति द्वारा स्वप्न फल कहना (६-१२), स्वप्नों का विस्तृत वर्णन, स्वप्नलक्षण पाठकों से उनके फल-विषयक जानकारी प्राप्त करना) [स्वप्न विषयक वर्णन बाद में जोड़ा गया है ऐसा पूज्य मुनि श्रीपुण्यविजयजी का स्पष्ट अभिप्राय है]

(३) गर्भापहरण के बाद सिद्धार्थ के घर में देवताओं द्वारा बहुमूल्य निधान लाना (८४)।

(४) माता पर अनुकम्पा लाकर भगवान् महावीर द्वारा गर्भ में हलन-चलन बन्द कर देना और फिर अभिग्रह धारण करना कि माता-पिता के जीते प्रव्रज्या धारण नहीं करूँगा (८७-९१) (आचारांग में मात्र प्रतिज्ञा पूरी होने का उल्लेख है)।

(५) कुण्डपुर को सजाने का वर्णन, नामकरण के अवसर पर दशाह मनाने का लम्बा वर्णन (९६-९९)।

(६) गुरुजनों की आज्ञा लेकर प्रव्रज्या धारण करना (११०)।

(७) वर्षाधिक समय तक चीवर रखना. बाद में 'अचेल पाणि-पडिग्गह' बनना (११५)।

(८) इसके पश्चात् जो सामग्री मिलती है वह आचारांग में नहीं दी गयी है—

गाँव और नगर में ठहरने की मर्यादा, वर्षावास एवं स्थलों का उल्लेख, इन्द्रभूति गौतम को केवल-ज्ञान, मल्लवियों एवं लिच्छवियों द्वारा द्रव्योद्योत करना, भविष्यवाणी इत्यादि (११७-१४७)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(९) आचारांग के महावीर-चरित्र के साथ तुलना करने पर ये सब प्रसंग बाद में जुड़े हैं ऐसा स्पष्ट मालूम होता है।

(१०) इनके अलावा शक्रेन्द्र द्वारा की गई स्तुति (१३-१६), उनके द्वारा यह विचार करना कि तीर्थंकर ऐसे कुल में जन्म ले ही नहीं सकते और हरिणेगमेसि की नियुक्ति करके गर्भ का अपहरण करवाने तक का प्रसंग (१७–२८) बाद में जोड़ा गया है। इतने लम्बे वर्णन के बाद जिसमें गर्भापहरण हो जाता है कल्पसूत्र के सूत्र ३० में गर्भापहरण किये जाने की बात संक्षेप में फिर से कही गयी है। इससे मालूम होता है कि सूत्र ३० में उपलब्ध सामग्री का ही विस्तारपूर्वक वर्णन बाद में १७ से २८ सूत्रों में किया गया है। इसी सूत्र ३० की सामग्री आचारांग के सूत्र ७३५ में भी वैसी ही मिलती है। अतः स्पष्ट है कि विस्तृत वर्णन बाद का है।

(११) सामान्य शाटक के बदले में देव-दूष्य का उल्लेख (११४), उन्हें तेलोक्कनायग और धम्मवर चक्कवट्टी कहना (१), एक अनुकम्पक देव के बदले शक्रेन्द्र एवं हरिणेगमेसि को गर्भापहरण के साथ जोड़ना (१७-२८) जन्म के समय अमूल्य वस्तुओं की वर्षा राजभवन में ही करवाना (१०९), अपहरण के समय 'अप्पाबाहं अप्पाबाहेणं' का उल्लेख (३०) एवं जन्म के समय 'पुव्वरत्तावरत्तकाल-समयंसि' (३०,९३) का उल्लेख, जन्म के समय पर अनेक वस्तुओं की वर्षा (९५) और गर्भ में आने पर समृद्धि में अनेक अधिक वस्तुओं का जुड़ना (८५), महावीर के विशेषणों में वृद्धि (११०,१२०) दीक्षा के समय देवों और लोगों द्वारा स्तुति एवं प्रशंसा का प्रकरण (११०-११३)।

ये सब बातें आचारांग में उपलब्ध नहीं हैं और कल्पसूत्र में भी बाद में जोड़ी गई हैं।

३. (ख) भाषा में त्रुटियाँ

(१) समणे भगवं महावीरे····
आरोगा आरोगं दारयं पयाया—९३

३. (ग) समास युक्त एवं कृत्रिम शैली होने के कारण निम्न प्रसंग बाद में जुड़े हैं ऐसा स्पष्ट है।

गर्भापहरण का प्रसंग (१३-१५)
शयनगृह (३३)
स्वप्नों के वर्णन (३४-४७)
अट्टनशाला, मज्जनगृह, उपस्थानशाला,
स्वप्न पाठकों द्वारा स्वप्न-फल कहना (६३-७६)
जन्मोत्सव मनाना (९७-९९)
दीक्षा के लिए प्रस्थान (११३)
विहार काल में भगवान् महावीर की सहिष्णुता (११७-११९)

४. उपसंहार

कल्पसूत्र एवं आचारांग के महावीर-चरित्र में समय-समय पर वृद्धि एवं परिवर्तन होते हुए भी आचारांग में कुछ मूल बातें सुरक्षित रही हैं जो कल्पसूत्र से प्राचीन लगती हैं और वे इस प्रकार हैं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(१) आचारांग में कुण्डपुर (७३४, ७३५, ७५३) को एक संनिवेश कहा गया है जब कि कल्पसूत्र में उसे (२, १५, १९, २३, २५, २७, ३०) एक नगर कहा गया है।

(२) आचारांग में गर्भापहरण के साथ (७३५) मात्र एक अनुकम्पक देव जुड़ा हुआ है जब कि कल्पसूत्र में इस देव को हरिणेगमेसि (१७-२८) कहा गया है और इस कार्य के साथ शक्रेन्द्र को भी जोड़ दिया गया है। हरिणेगमेसि का यह वर्णन भगवतीसूत्र में (सू० १,७) आता है।

(३) आचारांग में प्रव्रज्या के समय एक शाटक ग्रहण (७६६) करने का उल्लेख है जब कि कल्पसूत्र में (११४) उसके साथ दिव्यता जोड़ कर उसे देवदूष्य कहा गया है। आचारांग प्रथम श्रुतस्कन्ध के उवहाणसुत्त (२५५) में भी देवदूष्य का उल्लेख नहीं है (णो चेविमेण वत्थेण पिहिस्सामि) परन्तु वस्त्र का ही उल्लेख है [आचारांग के अनुसार (७६६) एक शाटक ग्रहण करके दीक्षा के समय सभी आभरण-अंलकारों का त्याग करते हैं। बाद में कहीं पर भी उस शाटक का उल्लेख नहीं आता है इससे ऐसा अनुमान हो सकता है कि दीक्षा के कुछ समय बाद उस शाटक को भी त्याग दिया होगा। उवहाणसुत्त (२५७, २७५) के अनुसार उसे वर्षाधिक रखा था। कल्पसूत्र (११५) के अनुसार देवदूष्य को एक वर्ष के बाद छोड़ दिया था।]

(४) इन तथ्यों के आधार से कहा जा सकता है कि सभी परिवर्तनों के बावजूद भी आचारांग के द्वितीय श्रुतस्कन्ध का महावीर-चरित्र आचारांग के प्रथम श्रुतस्कन्ध के मूल के नजदीक प्रतीत होता है। कल्पसूत्र का महावीर-चरित्र चाहे प्रथम स्थिति में आचारांग के द्वितीय श्रुतस्कन्ध के महावीर-चरित्र का आधार रहा हो, किन्तु बाद में उसमें बहुत अधिक जोड़ दिया गया है और इस प्रकार वह अपने मूल रूप में स्थित नहीं रह सका।

(५) महावीर-चरित्र : संभावित विकास

मूल प्रसंग १ से ५ एवं दोनों ग्रन्थों में विकसित सामग्री

आचारांग	कल्पसूत्र
(१) गर्भ में अवतरण	
(क) कुल की समृद्धि में वृद्धि होना।	(क) तेईस तीर्थंकरों के बाद,
	(ख) पूर्व तीर्थंकरों के निर्देशानुसार,
	(ग) चरम तीर्थंकर के रूप में गर्भ में आना,
	(घ) कुल की समृद्धि में वृद्धि होना [आचारांग के बाद कल्पसूत्र में जुड़ा होगा क्योंकि अर्वाचीन प्रतों में ही यह बात मिलती है।]
	(ङ) स्वप्न-दर्शन
	(च) स्वप्न-वर्णन [स्वप्न-दर्शन के बाद यह जोड़ा गया होगा।]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२) गर्भ का अपहरण

(क) एक अनुकम्पक देव द्वारा अपहरण ['जीयमेयं' शब्द कल्पसूत्र से लिया गया]।	(क) 'जीयमेयं का वर्णन
(ख) दीक्षा लेते समय प्रतिज्ञा पूरी होने का उल्लेख मात्र [माता-पिता के जीवन काल में दीक्षा नहीं लेने की यह बात कल्पसूत्र से ली गयी है]।	(ख) शक्रेन्द्र एवं हरिणेगमेसि देव को इस घटना के साथ जोड़ना [यह आचारांग के बाद की सामग्री मालूम होती है]।
	(ग) शक्रेन्द्र द्वारा स्तुति।
	(घ) देवताओं द्वारा सिद्धार्थ के घर बहुमूल्य निधान लाना (स्वतन्त्र)।
	(ङ) अनुकम्पावश गर्भ में हलन-चलन बन्द करना।
	(च) माता-पिता के जीवन काल में दीक्षा नहीं लेने का अभिग्रह धारण करना।

(३) नामकरण

(क) दशाह का उल्लेख मात्र।	(क) नामकरण के अवसर पर दशाह मनाने का लम्बा वर्णन।
(ख) पाँच धात्रियों द्वारा संवर्धन।	(ख) उस समय नगरी को सजाना।
(ग) परिपक्व ज्ञान वाले होना।	(ग) परिपक्व ज्ञान वाले होने की यह बात स्वप्न-फल बताते समय स्वप्न-वर्णन में कह दी गयी है।
(घ) आसक्ति रहित पंचेन्द्रिय भोगों का सेवन संयम-पूर्वक करना।	
(ङ) माता-पिता को पार्श्वापत्यी कहना (स्वतन्त्र)।	
(च) एक संवत्सर तक दान देना।	
(छ) दीक्षा लेने के अभिप्राय वाले होना।	
(ज) इसके बाद देवों द्वारा महिमा।	

(४) प्रव्रज्या

(क) एक शाटक ग्रहण करके प्रव्रज्या धारण करना।	(क) गुरुजनों की आज्ञा लेकर दीक्षा ग्रहण करना (स्वतन्त्र)।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(ख) वैश्रमण एवं शक्रेन्द्र द्वारा आभरण एवं केश-ग्रहण करना ।

(ग) उस अवसर पर मनःपर्ययज्ञान का होना ।

(घ) बारह वर्ष तक उपसर्ग सहन करने की प्रतिज्ञा धारण करना ।

(५) केवल ज्ञान

(क) प्रथम उपदेश पहले देवताओं को और बाद में मनुष्यों को देना ।

(ख) शाटक के बदले देवदूष्य का उल्लेख ।

(ग) वर्षाधिक चीवर धारण कर बाद में उसका त्याग ।

अहमदाबाद

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org